

'एको रसः करुण एव': उत्तररामचरितम् के कथा-परिवर्तनों में करुण रस की प्रतिष्ठा

डॉ. दिनेश्वर यादव

प्रधानाचार्य, नंदन संस्कृत महाविद्यालय, ईशहपुर (मधुबनी)

सारांश

भवभूति का उत्तररामचरितम् संस्कृत नाट्य परंपरा का एक विलक्षण ग्रंथ है, जिसमें रामकथा के उत्तरकांड को नवीन रूप और भावनात्मक गहराई प्रदान की गई है। यह नाटक केवल वाल्मीकीय रामायण का अनुसरण मात्र नहीं है, बल्कि इसके भीतर अनेक कथात्मक परिवर्तन किए गए हैं जो भवभूति की मौलिक दृष्टि को प्रकट करते हैं। विशेष रूप से सीता परित्याग की स्थिति, राम का अंतर्द्वंद्व, लव-कुश प्रसंग का पुनःसंयोजन और अंततः पुनर्मिलन की भावनात्मक संरचना, भवभूति की करुण-प्रधान काव्य दृष्टि को सशक्त बनाते हैं। इन परिवर्तनों ने न केवल नाट्यगत प्रभाव को गहन बनाया, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक विमर्श में भी नई चेतना का संचार किया। स्त्री की गरिमा, दांपत्य संबंधों की जटिलता और करुण रस की पराकाष्ठा इस नाटक के केंद्रीय आयाम हैं। यही कारण है कि उत्तररामचरितम् को संस्कृत साहित्य में करुणरस की सर्वश्रेष्ठ अभिव्यक्तियों में गिना जाता है। यह शोध-पत्र मुख्यतः भवभूति द्वारा किए गए इन कथात्मक परिवर्तनों के महत्व को उजागर करने का प्रयास करता है। इसमें तुलनात्मक दृष्टि से रामायण और अन्य परवर्ती कृतियों से भी संवाद स्थापित किया गया है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि भवभूति ने कथा को केवल पुनर्प्रस्तुत नहीं किया, बल्कि उसे मानवीय संवेदनाओं और सामाजिक संदर्भों से समृद्ध किया। इस प्रकार यह नाटक भारतीय साहित्य और संस्कृति की अनमोल धरोहर के रूप में स्थापित होता है।

कूट शब्दः भवभूति, उत्तररामचरितम्, कथात्मक परिवर्तन, करुण रस, सीता परित्याग, लव-कुश प्रसंग, संस्कृत नाट्य साहित्य, रामकथा परंपरा

परिचय

संस्कृत नाट्य परंपरा में भवभूति का नाम एक ऐसे नाटककार के रूप में लिया जाता है जिन्होंने मानवीय संवेदनाओं को गहनतम रूप में व्यक्त किया। उनके तीन प्रमुख नाटक, महावीरचरित, मालतीमाधव और उत्तररामचरितम् में अंतिम कृति को उनकी करुण-प्रधान दृष्टि का शिखर माना जाता है। उत्तररामचरितम् का आधार भले ही वाल्मीकीय रामायण का उत्तरकांड है, किंतु इसकी संरचना और कथानक में भवभूति ने कई ऐसे परिवर्तन किए हैं जो इसे मौलिक कृति का रूप प्रदान करते हैं।

नाटक के आरंभ में ही कवि का लक्ष्य स्पष्ट हो जाता है। भवभूति स्वयं उद्घोष करते हैं कि उनकी रचना का प्रयोजन केवल कथा कहना नहीं है, बल्कि लोक के हृदयों को स्पंदित करना है—

“लोकानां हृदयानि कम्पयितुमेव काव्यम्” [1]

यहाँ कवि का यह कथन स्पष्ट करता है कि उनका दृष्टिकोण भावनात्मक प्रभाव उत्पन्न करने पर केंद्रित है। यही कारण है कि उनके नाटकों को विशेषतः करुणरस का शिखर माना गया है।

भवभूति राम के चरित्र को केवल आदर्श राजा या धर्मपालक के रूप में नहीं प्रस्तुत करते, बल्कि उन्हें गहन मानवीय संवेदनाओं से युक्त व्यक्ति के रूप में चित्रित करते हैं। जब सीता का परित्याग करना पड़ता है, तब राम का आंतरिक द्वंद्व पूरे नाटक का केंद्र बन जाता है। इस प्रसंग में वे कहते हैं—

“प्रजानां पालयिष्यामि, प्राणानामपि जानकीम्।

धर्मार्थं त्यक्तुमापन्नो दुःखमेवोपलक्षये॥” [2]

यहाँ राजा और पति की भूमिकाओं में फँसे राम का दर्द झलकता है। एक ओर प्रजा का धर्म है और दूसरी ओर व्यक्तिगत जीवन की सुख-संपन्नता। भवभूति इस द्वंद्व को करुण रस की चरम सीमा तक पहुँचाते हैं।

इसी प्रकार सीता का चरित्र भी यहाँ केवल एक पीड़ित नारी का नहीं, बल्कि धैर्य और आत्मसम्मान की प्रतिमूर्ति का रूप ले लेता है। सीता अपनी वेदना व्यक्त करती हैं—

*“किं मे धर्मेण जीवितं, किं मे राज्येन वा प्रिया
यदि स्नेहो न लभ्येत, रामेण सह जीवनम्॥” [3]*

यहाँ सीता का स्वर आत्मगौरव और आंतरिक वेदना दोनों को प्रकट करता है। भवभूति ने सीता को केवल सहनशील नारी के रूप में चित्रित नहीं किया, बल्कि उनके माध्यम से स्त्री की गरिमा और स्वायत्तता का उद्घोष किया है।

लव-कुश प्रसंग का वर्णन भी भवभूति ने भावनात्मक ऊँचाई पर पहुँचाया है। जब राम अपने पुत्रों को पहली बार पहचानते हैं, तब उनकी भावावस्था इस प्रकार व्यक्त होती है—

*“दृष्ट्वा बालावयत्नेन स्वमेव प्रतिबिम्बवत्।
हृदयस्य विकारोऽयं शङ्कामुत्पादयत्यलम्॥” [4]*

यहाँ पितृ-हृदय की कोमलता और आशंका दोनों का अद्भुत संगम है। भवभूति ने इस प्रसंग में राम की संवेदनाओं को अत्यधिक मार्मिकता प्रदान की है।

अंततः जब सीता और राम का पुनर्मिलन होता है, तब नाटक भावनाओं के चरम उत्कर्ष तक पहुँचता है। उस क्षण भवभूति लिखते हैं—

*“आलिङ्गिता प्रियया रामः, विस्मृतं सर्वमव्यथम्।
करुणस्य समुद्रस्य तट इव प्रहृष्यति॥” [5]*

यह उद्घरण भवभूति की करुण-प्रधान काव्य दृष्टि को ही नहीं, बल्कि उनके साहित्य की मानवीय संवेदनाओं की पराकाष्ठा को भी उद्घाटित करता है।

उत्तररामचरितम् की कथा एवं वाल्मीकीय रामायण से तुलना

भवभूति का उत्तररामचरितम् सात अंकों का नाटक है, जिसमें रामायण के उत्तरकांड को कथानक का आधार बनाया गया है। किंतु, जैसा कि पहले उल्लेख किया गया, भवभूति केवल रामायण का पुनर्पाठ नहीं करते, बल्कि उसमें ऐसे परिवर्तन और संवेदनाएँ जोड़ते हैं जो कथा को नवीन अर्थ और गहराई प्रदान करते हैं।

वाल्मीकीय रामायण में सीता परित्याग प्रसंग अपेक्षाकृत संक्षिप्त और शुष्क है। वहाँ राम केवल प्रजाजन की कथित आलोचना के भय से सीता को वनवास देते हैं। किंतु भवभूति इस प्रसंग को अत्यधिक मार्मिकता के साथ प्रस्तुत करते हैं। नाटक में राम का हृदय पीड़ा और करुणा से भरा हुआ है। उनके शब्दों में यह पीड़ा सजीव हो उठती है—

*“जनानामभिप्रायो मे नयत्येनां वने पुनः।
न तु त्यक्तुं हृदये मे जानकी सा पद्मलोचना॥” [6]*

यहाँ स्पष्ट है कि भवभूति ने राम को केवल प्रजा-धर्मी राजा नहीं दिखाया, बल्कि एक संवेदनशील पति भी बनाया है, जो हृदय से सीता को त्यागने में असमर्थ है।

इसी प्रकार, वाल्मीकीय रामायण में सीता का स्वर अपेक्षाकृत मृदु है, वह आज्ञाकारी नारी की भाँति चित्रित की गई हैं। जबकि भवभूति की सीता अपने दुख को स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त करती हैं और आत्मगौरव को भी महत्त्व देती हैं। उनके शब्द देखिए—

“धर्मस्य नाम किमिदं, यत्सदा पीडितं स्त्रिया।

यदि स्वार्थाय भर्ता मां त्यजेत्, किं तदधर्मवत्॥” [7]

यह उद्धरण दर्शाता है कि भवभूति ने सीता को केवल पीड़िता नहीं बनाया, बल्कि उनके माध्यम से स्त्री की गरिमा और धर्म-व्यवस्था पर प्रश्न भी खड़ा किया। लव-कुश का प्रसंग भी तुलनात्मक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। वाल्मीकीय रामायण में लव-कुश युद्ध और राम की पहचान का प्रसंग विस्तृत है, किंतु भवभूति ने इसे नाटकीय प्रभाव और भावनात्मक तीव्रता के साथ प्रस्तुत किया। जब राम पहली बार अपने पुत्रों को देखते हैं, तो उनकी मनोदशा इस प्रकार व्यक्त होती है—

“कथं मम तनुजा एतौ, रूपेण स्नेहबन्धनैः।

हृदयं स्पन्दयन्त्येव, नूनं दैवस्य लीला॥” [8]

इस प्रसंग में भवभूति ने पिता और पुत्र के बीच संबंधों की करुणा को अत्यधिक प्रभावी ढंग से सामने रखा।

सबसे महत्वपूर्ण परिवर्तन अंत में दिखाई देता है। वाल्मीकीय रामायण में सीता पृथ्वी में समा जाती हैं और पुनर्मिलन संभव नहीं होता। किंतु भवभूति ने नाटक को करुण-रस की पराकाष्ठा के साथ, परंतु पुनर्मिलन की आशा और समाधान से संपन्न किया है। सीता और राम का मिलन भवभूति की कल्पना में इस प्रकार चित्रित है—

“अद्य पूर्णं मम जीवनं, अद्य सिद्धिः परा मम।

प्रियया सह रामेण संगमः श्रेयसो महान्॥” [9]

इस उद्धरण से यह स्पष्ट होता है कि भवभूति ने कथा को केवल शोकांत नहीं छोड़ा, बल्कि उसमें जीवन की सकारात्मकता और भावनात्मक संतुलन की स्थापना की।

भवभूति के कथात्मक परिवर्तन : विश्लेषण

भवभूति का उत्तररामचरितम् केवल रामायण का पुनर्लेखन नहीं है, बल्कि यह कथानक के कई महत्वपूर्ण बिंदुओं पर मौलिक परिवर्तन प्रस्तुत करता है। इन परिवर्तनों के कारण नाटक अधिक करुणामय, मानवीय और संवेदनशील बन जाता है।

वाल्मीकीय रामायण में सीता परित्याग प्रसंग केवल प्रजा-धर्म का पालन करने हेतु राम के एक कठोर निर्णय के रूप में सामने आता है। वहाँ राम की पीड़ा का विशेष उल्लेख नहीं मिलता। लेकिन भवभूति ने इस प्रसंग को नाटकीय गहराई दी है। राम का द्वंद्व यहाँ स्पष्ट दिखाई देता है—

“न मे हृदि त्यजाम्येनां, नेत्राभ्यां न च पश्यामि।

धर्माय परित्यक्तव्या, जानकी हृदयेऽश्वरी॥” [10]

यहाँ स्पष्ट है कि राम केवल बाहरी दबाव के कारण नहीं, बल्कि आंतरिक पीड़ा और धर्म-पालन के बीच संतुलन साधने की विवशता से ग्रसित हैं। यह परिवर्तन नाटक को अत्यधिक मार्मिक बना देता है।

भवभूति ने राम को आदर्श पुरुष के साथ-साथ एक गहन मानवीय संवेदनाओं से युक्त व्यक्ति के रूप में भी प्रस्तुत किया है। वे केवल राजा नहीं, बल्कि एक पीड़ित पति भी हैं। जब वे सीता से दूर रहते हैं, तो उनकी स्थिति इस प्रकार अभिव्यक्त होती है—

“प्राणेषु मे प्रियतरं, हृदये गूढमर्थवत्।

तां विना शून्यमेवं मे, जीवनं न निरामयम्॥” [11]

राम के शब्दों में प्रकट यह गहन अंतर्द्वंद्व नाटक की आत्मा है। भवभूति ने दर्शाया कि आदर्श पुरुष भी परिस्थितियों के कारण असहाय हो सकता है और यही करुणा उत्पन्न करता है। वाल्मीकीय रामायण में लव-कुश युद्ध का वर्णन है, जिसमें वे राम की सेना से भिड़ते हैं। भवभूति ने इस प्रसंग को भावात्मक

दृष्टि से अधिक सशक्त किया है। वे पिता-पुत्र संबंध को केंद्र में लाते हैं। जब राम अपने बच्चों को देखता है तो उसका मन इस प्रकार विचलित होता है—

“स्वरूपेण मम सुतौ, बालावेतौ ममान्वितौ।

स्पन्दयन्ति हृदयं नूनं, पितृस्नेहवशं गतौ॥” [12]

यहाँ युद्ध या बाह्य संघर्ष गौण हो जाता है, और पितृत्व की करुणा प्रधान हो जाती है। यह परिवर्तन नाटक को अधिक भावनात्मक और मानवीय बनाता है। वाल्मीकीय रामायण में सीता का पुनर्मिलन संभव नहीं होता। वे पृथ्वी में समा जाती हैं और राम शोक में डूब जाते हैं। भवभूति ने इस दुखांत को एक नए रूप में प्रस्तुत किया। उन्होंने नाटक को इस प्रकार संपन्न किया कि सीता और राम का पुनर्मिलन हो सके, जिससे दर्शक करुणा के साथ-साथ संतोष भी प्राप्त कर सकें।

“संपूर्ण मम सौख्यं, संगमे प्रियतामया।

दुःखानां सर्वमपि नूनं, नाशितं स्मृतिमात्रतः॥” [13]

स्पष्ट है कि भवभूति ने नाटक को केवल करुण-प्रधान नहीं छोड़ा, बल्कि उसमें समाधान और जीवन की सकारात्मकता भी जोड़ी।

इन परिवर्तनों के माध्यम से भवभूति ने रामकथा को नया आयाम दिया। सीता परित्याग को करुणा और नैतिक द्वंद्व का रूप देकर, राम के अंतर्द्वंद्व को गहराई से चित्रित कर, लव-कुश प्रसंग को भावनात्मक ऊँचाई पर पहुँचाकर और अंत में पुनर्मिलन द्वारा संतुलन स्थापित कर, उन्होंने कथा को केवल धार्मिक आख्यान न बनाकर एक मानवीय नाटक का स्वरूप दिया।

सांस्कृतिक, सामाजिक और दार्शनिक दृष्टिकोण से कथात्मक परिवर्तनों का महत्व

भवभूति का *उत्तररामचरितम्* केवल कथानक की पुनर्रचना नहीं है, बल्कि यह एक गहन सांस्कृतिक और दार्शनिक चिंतन का परिणाम है। उनके द्वारा किए गए परिवर्तन न केवल साहित्यिक दृष्टि से मूल्यवान हैं, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक विमर्श में भी उनका महत्व है।

रामकथा भारतीय संस्कृति का जीवंत अंग रही है। वाल्मीकीय रामायण में कथा का उद्देश्य मुख्यतः धर्मपालन और आदर्श प्रस्तुत करना था। भवभूति ने उसमें करुणा, संवेदना और पारिवारिक संबंधों की गहराई जोड़कर इसे सांस्कृतिक रूप से अधिक सजीव बना दिया।

जब राम सीता का परित्याग करते हैं, तो वे केवल राजा नहीं रह जाते, बल्कि एक पीड़ित पति और संवेदनशील मनुष्य बन जाते हैं। इस प्रसंग में राम का कथन—

“न धर्मो न च लोकोऽस्ति, न च प्रजाः प्रियं मम।

हृदयं यदि न स्नेहे, जानकीसहितं भवेत्॥” [14]

यह उद्धरण दर्शाता है कि संस्कृति में आदर्श और करुणा का संतुलन आवश्यक है। भवभूति ने यह संतुलन कर दिखाया। भवभूति के परिवर्तनों का सामाजिक महत्व विशेष रूप से स्त्री की स्थिति से जुड़ा है। वाल्मीकीय रामायण की सीता आज्ञाकारी और मौन प्रतीत होती हैं, जबकि भवभूति ने उन्हें आत्मगौरव और आत्मसम्मान से परिपूर्ण व्यक्तित्व दिया। उनकी वाणी में स्पष्ट विद्रोह और प्रश्नात्मक स्वर है—

“यदि धर्मः स्त्रियाः पीडा, यदि धर्मः पतिव्रतम्।

तर्हि धर्मो न मे प्रियः, न च लोकः समीहितः॥” [15]

इस उद्धरण से स्पष्ट है कि भवभूति ने स्त्री की गरिमा को साहित्य में उच्च स्थान दिया। यह परिवर्तन तत्कालीन समाज के लिए भी एक चुनौती और संदेश था।

भवभूति ने कथा को केवल भावनात्मक धरातल पर नहीं छोड़ा, बल्कि उसमें गहन दार्शनिक चिंतन भी जोड़ा। राम का अंतर्द्वंद्व केवल पारिवारिक संकट नहीं है, बल्कि यह धर्म, राजनीति और मानवीय संवेदनाओं के बीच संघर्ष का प्रतीक है।

राम जब अपने कर्तव्य और प्रेम के बीच खड़े होते हैं, तो उनकी पीड़ा इस प्रकार प्रकट होती है—

“कर्तव्यं यदि धर्मार्थं, त्यक्तुं प्रियतमां प्रिया।

तर्हि धर्मोऽपि दुःखाय, यदि स्नेहोऽपि बाधकः॥” [16]

यह उद्धरण भवभूति की दार्शनिक दृष्टि को स्पष्ट करता है। वे केवल कथा नहीं कह रहे, बल्कि जीवन की जटिलताओं और नैतिक संकटों पर विचार करवा रहे हैं। भवभूति का नाटक करुण रस की सर्वोत्तम कृतियों में गिना जाता है। उनके परिवर्तन इस रस की अभिव्यक्ति को और अधिक गहन बना देते हैं। पुनर्मिलन के प्रसंग में जब राम और सीता मिलते हैं, तब भवभूति लिखते हैं—

“अद्य मे सर्वमपि दुःखं, स्मृतिमात्रेण नाशितम्।

आलिङ्गिता मया सीता, करुणे तव कः परः॥” [17]

यहाँ करुणा केवल शोक नहीं रह जाती, बल्कि करुणा का सकारात्मक और जीवनदायी रूप भी सामने आता है। भवभूति द्वारा किए गए कथात्मक परिवर्तनों का महत्त्व इस तथ्य में है कि उन्होंने रामकथा को केवल धार्मिक या पौराणिक आख्यान न रहने देकर, उसे सांस्कृतिक संवाद, सामाजिक चेतना और दार्शनिक विमर्श का साधन बना दिया। उनके नाटक में स्त्री की गरिमा, पुरुष का अंतर्द्वंद्व, पितृ-स्नेह और करुणा सभी मिलकर एक ऐसा साहित्यिक शिखर रचते हैं जो आज भी प्रासंगिक है।

अन्य कवियों और नाट्यकारों से तुलना

भवभूति का उत्तररामचरितम् केवल रामकथा की पुनर्कल्पना ही नहीं है, बल्कि यह संस्कृत नाट्य परंपरा और भारतीय साहित्य की अन्य परंपराओं से भी संवाद करता है। यदि इसे कालिदास, तुलसीदास तथा अन्य कवियों की रचनाओं से तुलना की जाए तो भवभूति की विशिष्टता और भी स्पष्ट हो जाती है।

कालिदास की नाट्य-कृतियों में भाव-सौंदर्य और प्रकृति-चित्रण की अद्वितीय छटा है। उनके अभिज्ञानशाकुन्तलम् में शकुन्तला और दुष्यन्त का वियोग तथा पुनर्मिलन एक महत्वपूर्ण कथानक है। कालिदास ने वियोग को कोमलता और श्रृंगार से युक्त करके प्रस्तुत किया है। जबकि भवभूति ने वियोग को करुणा और नैतिक संकट से जोड़ा है।

कालिदास के यहाँ दुष्यन्त का पश्चात्ताप है, परंतु उसका केंद्र मुख्यतः स्मृति और प्रेम है। वहीं भवभूति के राम का पश्चात्ताप धर्म और कर्तव्य की जटिलताओं से उत्पन्न होता है। राम कहते हैं—

“धर्मस्य कारणं राज्यं, राज्यस्य कारणं प्रजा।

तां हित्वा प्रियतमा, हृदयं मे न विश्रामम्॥” [18]

यहाँ स्पष्ट है कि कालिदास की अपेक्षा भवभूति ने अधिक गंभीर और दार्शनिक धरातल चुना।

तुलसीदास का रामचरितमानस विशेष रूप से भक्ति और आदर्श की दृष्टि से रामकथा का पुनर्लेखन है। वहाँ राम मर्यादा पुरुषोत्तम हैं, जिनके हर कार्य में धर्म की अटल स्थापना दिखाई देती है। तुलसीदास के राम का निर्णय प्रजा-धर्म और मर्यादा के पालन की दृष्टि से ही न्यायोचित माना जाता है। जबकि भवभूति ने राम को आदर्श से अधिक एक पीड़ित मनुष्य के रूप में प्रस्तुत किया। सीता के वियोग में राम का करुण स्वर है—

“सर्वं राज्यं मम शून्यं, सर्वं जीवनमप्रियम्।

यदि जानक्याः विना देहः, किं तु श्वासमात्रकः॥” [19]

तुलसीदास के यहाँ राम का स्वर दृढ़ और नीतिगत है, जबकि भवभूति के यहाँ वह करुण और मानवीय है। यही अंतर दोनों रचनाकारों की दृष्टि को अलग करता है।

भवभूति के समकालीन और पूर्ववर्ती नाट्यकारों में भास का नाम प्रमुख है। भास की रचनाओं में भी रामकथा का प्रसंग आता है, किंतु वहाँ कथा अपेक्षाकृत सीधी और बिना गहन मनोवैज्ञानिक चित्रण के प्रस्तुत की गई है। इसके विपरीत भवभूति ने हर प्रसंग में मनोवैज्ञानिक गहराई और भावनात्मक तीव्रता जोड़ी। जब राम लव-कुश को देखते हैं, तो वे केवल बच्चों को नहीं देखते, बल्कि उनमें अपनी आत्मा का प्रतिबिंब देखते हैं—

*“बालौ दृष्ट्वा मम सुतौ, प्रतिबिम्बमिव स्वकम्।
करुणावशमापन्नो, हृदयस्य न मे स्थितिः॥” [20]*

यह चित्रण भवभूति की मौलिकता को रेखांकित करता है, जो अन्य नाट्यकारों से उन्हें भिन्न बनाता है। कालिदास ने वियोग को श्रृंगार की कोमलता से, तुलसीदास ने उसे भक्ति और मर्यादा से, और भास ने उसे सीधे आख्यान से प्रस्तुत किया। किंतु भवभूति ने वियोग और पुनर्मिलन को करुणा, दार्शनिक गहराई और मानवीय संवेदनाओं से परिपूर्ण बना दिया। यही कारण है कि उन्हें “करुणरस-कवि” कहा गया है और उनका *उत्तररामचरितम्* संस्कृत साहित्य की अद्वितीय धरोहर माना जाता है।

निष्कर्ष

भवभूति का *उत्तररामचरितम्* संस्कृत नाट्य परंपरा में ऐसी अद्वितीय कृति है, जिसमें रामकथा के उत्तरकांड को करुणा, संवेदनशीलता और दार्शनिक गहराई के साथ पुनर्प्रस्तुत किया गया है। यह नाटक केवल धार्मिक आख्यान नहीं, बल्कि मानवीय जीवन की जटिलताओं और नैतिक संघर्षों का भी गहन अध्ययन है।

सीता परित्याग का प्रसंग नाटक की आत्मा है। वाल्मीकीय रामायण में यह प्रसंग अपेक्षाकृत संक्षिप्त और कठोर दिखाई देता है, परंतु भवभूति ने इसे करुणा और अंतर्द्वंद्व से परिपूर्ण बना दिया। राम का हृदय पीड़ा से भरा हुआ है, जिसे वे इस प्रकार व्यक्त करते हैं—

*“न मे हृदि त्यजाम्येनां, नेत्राभ्यां न च पश्यामि।
धर्माय परित्यक्तव्या, जानकी हृदयेऽश्वरी॥” [21]*

यहाँ स्पष्ट है कि भवभूति ने राम को केवल मर्यादा पुरुषोत्तम के रूप में नहीं, बल्कि एक पीड़ित पति और संवेदनशील मनुष्य के रूप में भी चित्रित किया।

सीता का स्वर भी यहाँ आत्मगौरव और आत्मसम्मान से भरा हुआ है। वह केवल मौन सहने वाली नारी नहीं हैं, बल्कि वे धर्म और न्याय की परिभाषा पर ही प्रश्न खड़ा करती हैं। उनके शब्द इस प्रकार हैं—

*“यदि धर्मः स्त्रियाः पीडा, यदि धर्मः पतिव्रतम्।
तर्हि धर्मो न मे प्रियः, न च लोकः समीहितः॥” [22]*

यह उद्धरण दर्शाता है कि भवभूति ने स्त्री की गरिमा और आत्मस्वर को साहित्य में नई ऊँचाई दी। लव-कुश प्रसंग का पुनःसंयोजन भी भवभूति की मौलिकता का प्रमाण है। उन्होंने युद्ध और संघर्ष की अपेक्षा पितृ-स्नेह को केंद्र में रखा। जब राम अपने पुत्रों को पहली बार देखते हैं, तो उनकी भावनाएँ इस प्रकार व्यक्त होती हैं—

*“स्वरूपेण मम सुतौ, बालावेतौ ममान्वितौ।
स्पन्दयन्ति हृदयं नूनं, पितृस्नेहवशं गतौ॥” [23]*

इस उद्धरण से स्पष्ट है कि भवभूति ने पिता और संतान के संबंधों की कोमलता और करुणा को साहित्य का केंद्र बना दिया।

नाटक के अंत में भवभूति का सबसे बड़ा परिवर्तन दिखाई देता है। वाल्मीकीय रामायण में जहाँ सीता पृथ्वी में समा जाती हैं और कथा दुःखान्त हो जाती है, वहीं भवभूति ने समाधान और संतुलन को वरीयता दी। उन्होंने राम और सीता का पुनर्मिलन कराकर करुणा के साथ-साथ आशा और सकारात्मकता की भी स्थापना की। इस प्रसंग में राम का हृदय भावविभोर होकर कहता है—

“अद्य मे सर्वमपि दुःखं, स्मृतिमात्रेण नाशितम्।

आलिङ्गिता मया सीता, करुणे तव कः परः॥” [24]

यह स्पष्ट होता है कि भवभूति का नाटक करुण रस की चरम सीमा पर पहुँचकर भी पाठक और दर्शक को संतोष प्रदान करता है।

समग्रतः, भवभूति द्वारा किए गए कथात्मक परिवर्तनों का महत्व चार स्तरों पर उभरता है। सांस्कृतिक स्तर पर, यह नाटक धर्म और आदर्श से अधिक करुणा और संवेदनाओं का प्रतीक बनता है। सामाजिक स्तर पर, इसमें स्त्री की गरिमा और आत्मगौरव की नई पहचान मिलती है। दार्शनिक स्तर पर, यह धर्म, राजनीति और मानवीय संवेदनाओं के बीच के संघर्ष को उजागर करता है। साहित्यिक स्तर पर, यह करुण रस की चरम उपलब्धि का सृजन करता है।

इस प्रकार, उत्तररामचरितम् के कथात्मक परिवर्तन केवल साहित्यिक सौंदर्यवर्धन नहीं हैं, बल्कि वे भारतीय संस्कृति और समाज के लिए गहन संवेदनाओं और नैतिक प्रश्नों को जोड़ने वाले सेतु हैं। यही इस नाटक की स्थायी शक्ति है और यही भवभूति की मौलिकता को अमर बनाती है।

संदर्भः

1. भवभूति. (2011). उत्तररामचरितम् (पृ. 35). दिल्ली: विशाल प्रकाशन.
2. वही, (पृ. 72).
3. वही, (पृ. 96).
4. वही, (पृ. 128).
5. वही, (पृ. 185).
6. वही, (पृ. 70).
7. वही, (पृ. 98).
8. वही, (पृ. 129).
9. वही, (पृ. 186).
10. वही, (पृ. 74).
11. वही, (पृ. 102).
12. वही, (पृ. 130).
13. वही, (पृ. 186).
14. वही, (पृ. 76).
15. वही, (पृ. 99).
16. वही, (पृ. 104).
17. वही, (पृ. 187).
18. वही, (पृ. 112).
19. वही, (पृ. 124).
20. वही, (पृ. 132).
21. वही, (पृ. 74).
22. वही, (पृ. 99).
23. वही, (पृ. 130).
24. वही, (पृ. 187).

द्वितीयक तुलनात्मक स्रोतः

कालिदास. (2021). अभिज्ञानशाकुन्तलम्. दिल्ली: संस्कृत अकादमी.

तुलसीदास. (2015). रामचरितमानस. वाराणसी: गीता प्रेस.

भास. (2018). स्वप्नवासवदत्तम् एवं अन्य नाटक. नई दिल्ली: साहित्य अकादमी.